शास्त्राभ्यास से लाभ

1. ज्ञान से ही सम्यग्दर्शन उत्पन्न होता है।
2. ज्ञान से ही कषायों का अभाव हो जाता है।
3. ज्ञानाभ्यास से माया, मिथ्यात्व, निदान – इन तीन शल्यों का नाश होता है।
4. ज्ञान के अभ्यास से ही मन स्थिर होता है।
5. ज्ञान से ही अनेक प्रकार के दु:खदायक विकल्प नष्ट हो जाते हैं।
6. ज्ञानाभ्यास से ही धर्मध्यान व शुक्लध्यान में अचल होकर बैठा जाता है।
7. ज्ञानाभ्यास से ही जीव व्रत-संयम से चलायमान नहीं होते।
8. ज्ञान से ही जिनेन्द्र का शासन प्रवर्तता है। अशुभ कर्मों का नाश होता है।
9. ज्ञान से ही जिनधर्म की प्रभावना होती है।
10. ज्ञान के अभ्यास से ही लोगों के हृदय में पूर्व का संचित कर रखा हुआ पापरूपकर्म का ऋण नष्ट हो जाता है।
11. अज्ञानी जिस कर्म को घोर तप करके कोटि पूर्व वर्षों में खिपाता है, उस कर्म को ज्ञानी अन्तर्मुहूर्त में ही खिपा देता है।
12. ज्ञान के प्रभाव से ही जीव समस्त विषयों की वाञ्छा से रहित होकर संतोष धारण करते हैं।
13. ज्ञानाभ्यास/शास्त्राभ्यास से ही उत्तम क्षमादि गुण प्रगट होते हैं।
14. ज्ञान से ही भक्ष्य-अभक्ष्य का, योग्य-अयोग्य का, त्यागने-ग्रहण करने योग्य का विचार होता है।
15. ज्ञान से ही परमार्थ और व्यवहार दोनों व्यक्त होते हैं।
16. ज्ञान के समान कोई धन नहीं है और ज्ञानदान समान कोई अन्य दान नहीं है।
17. ज्ञान ही दु:खित जीव को सदा शरण अर्थात् आधार है।
18. ज्ञान ही स्वदेश में एवं परदेश में सदा आदर कराने वाला परम धन है।
19. ज्ञान धन को कोई चोर चुरा नहीं सकता, लूटने वाला लूट नहीं सकता, खोंसने वाला खोंस नहीं सकता।
20. ज्ञान किसी को देने से घटता नहीं है, जो ज्ञान-दान देता है; उसका ज्ञान निरन्तर बढता ही जाता है।
21. ज्ञान से ही मोक्ष प्रगट होता है।

(आधार : रत्नकरण्ड श्रावकाचार : पं. सदासुखदासजी कृत अभीक्षण ज्ञानोपयोग भावना)

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 31 (वीर नि. संवत् - 2539) 359 अंक : 11

मुनि बन आये...

मुनि बन आये बना।।टेक।।

शिव वनरी व्याहनकौं उमगे, मोहित भविक जना।।
रतनत्रय सिर सेहरा बांधैं, सजि संवर बसना।
संग बराती द्वादश भावन, अरु दशधर्मपना।।
मुनि बन आये...।।1।।

सुमति नारी मिली मंगल गावत, अजपा गीत घना।
राग दोष की अतिशबाजी, छूटत अगनि-कना।।
मुनि बन आये...।।2।।

दुविधि कर्म का दान बटत है, तोषित लोकमना।
शुकल ध्यान की अगनि जला करि, होमैं कर्मघना।।
मुनि बन आये...।।3।।

शुभ बेल्यां शिव बनरि बरी मुनि, अदभुत हरष बना।
निज मंदिर मैं निश्चल राजत 'बुधजन' त्याग घना।।
मुनि बन आये...।।4।।

– कविवर पण्डित बुधजनजी

छहढाला प्रवचन

8 अंग सहित सम्यक्त्व

जिन वच में शंका न धार वृष, भव-सुख-वांछा भानै।
मुनि-तन मलिन न देख घिनावै, तत्त्व-कुतत्त्व पिछानै।।
निज गुण अरु पर औगुण ढाँके, वा निजधर्म बढ़ावै।
कामादिक कर वृषतैं चिगते, निज पर को सु दिढ़ावै।।१२।।
धर्मी सों गौ-वच्छ-प्रीति सम, कर जिनधर्म दिपावै।
इन गुणतैं विपरीत दोष वसु, तिनकों सतत खिपावै।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

५. उपगूहन (उपबृंहण) अंग का वर्णन

अपने गुणों की प्रशंसा न करना, दूसरे की निंदा न करना, साधर्मी द्वारा कोई दोष लग गया हो तो उसे ढँकना, उस दोष को दूर करने का प्रयत्न करना तथा गुण की, धर्म की वृद्धि हो, ऐसा उपाय करना - ऐसा भाव सम्यग्दृष्टि का उपगूहन अथवा उपबृंहण अंग है।

धर्मात्मा को मार्दवभावना अर्थात् निर्मानता होती है। मेरे गुण जगत् में प्रसिद्ध हों और पूजा हो - ऐसी भावना उसे नहीं होती तथा कोई साधर्मी के दोष प्रसिद्ध करके उसको हलका दिखाने की भावना नहीं होती; परन्तु धर्म की वृद्धि कैसे हो, गुण की वृद्धि कैसे हो - यही भावना होती है। किसी अज्ञानी या अशक्तजन द्वारा पवित्र रत्नत्रयधर्म में लांछन का प्रसंग हो जाये तो धर्मी उसको दूर करते हैं, धर्म की निंदा नहीं होने देते। दोषों को दूर करना और वीतरागी गुणों की वृद्धि करना - यह सम्यक्त्व का अंग है। अत: ऐसा भाव सम्यग्दृष्टि के सहज होता है। जैसे माता को अपना पुत्र प्यारा है, अत: वह उसकी निन्दा सह नहीं सकती, इसलिए उसके दोष छिपाकर गुण प्रगट करना चाहती है, वैसे धर्मी को अपना रत्नत्रयधर्म प्यारा है,

अत: रत्नत्रयमार्ग की निन्दा को वह सह नहीं सकता, इसलिए वह ऐसा उपाय करता है कि जिससे धर्म की निन्दा दूर हो और धर्म की महिमा प्रसिद्ध हो। दोष को ढँकना-दूर करना और गुण को बढ़ाना - ये दोनों बातें इस पाँचवें अंग में आ जाती हैं। अत: इसे उपगूहन अथवा उपबृंहण अंग कहा जाता है।

धर्मात्मा निजगुण को ढाँकते हैं अर्थात् बाह्य में उसकी प्रसिद्धि की कामना नहीं करते, मेरा काम मेरे आत्मा में हो रहा है, वह दूसरे को दिखाने का क्या प्रयोजन है? दूसरे लोग मेरे गुण को जानें तो अच्छा - ऐसी बुद्धि धर्मी को नहीं होती। धर्मी अपने आत्मा में तो निजगुण की प्रसिद्धि (प्रगट अनुभूति) अवश्य करते हैं, अपने सम्यक्त्वादि गुणों को आप नि:शंक जानते हैं; परन्तु बाह्य में दूसरे लोगों द्वारा अपने गुणों की प्रसिद्धि से मान-बड़ाई लेने की बुद्धि धर्मी को नहीं होती एवं दूसरे धर्मात्माओं के दोषों को प्रसिद्ध करके निन्दा करने या उन्हें हलका दिखाने का भाव धर्मी को नहीं होता; परन्तु उनके सम्यक्त्वादि गुणों को मुख्य करके उनकी प्रशंसा करते हैं; इसप्रकार गुण की प्रीति से वे अपने में गुण की वृद्धि करते हैं और अवगुण को ढाँकते हैं तथा प्रयत्नपूर्वक उन्हें दूर करने का उद्यम करते हैं।

धर्मी को अपने गुण इष्ट हैं और दोष इष्ट नहीं हैं। किसी अन्य धर्मात्मा में हीन शक्तिवश कोई दोष हो गया हो तो उसे प्रसिद्ध करके उसका तिरस्कार नहीं करते; परन्तु युक्ति से उसके दोष दूर करते है; किन्तु इसका अर्थ ऐसा नहीं समझना कि मिथ्यादृष्टि चाहे जैसे कुमार्ग का प्रतिपादन करे तो भी उसकी भूल प्रसिद्ध न करे। मिथ्यामतों में तत्त्वों की विपरीतता कैसी है, मिथ्यादृष्टि लोग कैसी-कैसी भूल करते हैं - यह तो स्पष्ट दिखावे और सच्चा तत्त्व कैसा है, वह समझावे। यदि ऐसा न करे, कुमार्ग का खण्डन न करे, सत्यमार्ग का स्थापन न करे तो जीव हित का मार्ग कैसे जाने; अत: सत्य-असत्य की पहिचान कराना, उसमें किसी की निन्दा का प्रयोजन नहीं है। जीव के हित के लिए सत्यमार्ग की प्रसिद्धि का व असत्य के निषेध का भाव तो धर्मी को आता है। जहाँ धर्म की निन्दा हो, देव-गुरु की निन्दा हो - ऐसा प्रसंग धर्मात्मा से देखा नहीं जाता, वे अपनी शक्ति से उसे दूर करते हैं।

सभी धर्मात्माओं के उदयभाव समान नहीं होते; आत्मश्रद्धा सभी की समान हो; परन्तु उदयभाव तो भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं। भूमिका के अनुसार क्रोध-

मानादि दोष होते हों; किन्तु उनकी मुख्यता करके धर्मात्मा की या जिनशासन की निन्दा न होने दे। अरे, वे तो धर्मात्मा हैं, जिनेश्वर के भक्त हैं, आत्मा के अनुभवी हैं, सम्यग्दृष्टि हैं, मोक्ष के साधक हैं - ऐसे गुणों को प्रधान करके, परिणाम में कोई मन्दता हो गई हो तो उस दोष को गौण कर देते हैं, धर्म या धर्मात्मा की निन्दा नहीं होने देते। अहा, यह तो पवित्र जैनमार्ग, वीतरागता का मार्ग है। किसी अज्ञानी जन के निन्दा करने से वह मलिन नहीं हो जाता।

ऐसे मार्ग की श्रद्धा में सम्यग्दृष्टि जीव अत्यन्त निष्कंप रहते हैं; तीक्ष्ण असि-धार के समान उनकी श्रद्धा मिथ्यात्व की कुयुक्तियों का खण्डन कर देती है, किसी भी युक्ति से उनकी श्रद्धा चलित नहीं होती। ऐसे मार्ग को जानकर जो धर्मी हुआ है, उस जीव में यदि कोई सूक्ष्म दोष हो जाये तो उसके उपगूहन की यह बात है।

जहाँ गुण और दोष दोनों विद्यमान हों, वहाँ उसमें गुण की मुख्यता करके दोष को गौण करना उपगूहन है; परन्तु जिसके पास सच्चा मार्ग नहीं है और मिथ्यामार्ग को ही धर्म मान रहे हैं, उनको जगत् के हित के लिए प्रसिद्ध करें कि यह मार्ग असत्य है, दु:खदायक है; अत: उसका सेवन छोड़ो और परम सत्य वीतराग जैनमार्ग को जानकर उसका सेवन करो। धर्मात्मा अपने में जैसे रत्नत्रयधर्म की शुद्धि बढ़े - ऐसा उपाय करे। दुनिया से मुझे कोई प्रयोजन नहीं, मुझे तो मेरे आत्मा की शुद्धता वृद्धिंगत हो और वीतरागता हो, वही प्रयोजन है - ऐसी भावनापूर्वक धर्मात्मा अपने में धर्म की वृद्धि करते हैं, इसे उपबृंहण गुण कहते हैं।

धर्मी जानते हैं कि मेरे गुण मेरे में ही हैं, मेरी अनुभूति में मेरा आत्मा प्रसिद्ध हुआ है, इसको मैं स्वयं जानता हूँ; दुनिया को दिखाने का क्या काम है? क्या दुनिया के मानने से मेरे गुण की शुद्धि बढ़ती है और दुनिया के न देखने से क्या मेरे गुण की शुद्धि रुकती है ? नहीं, मेरा गुण तो मेरे में है। किसी धर्मात्मा के गुणों की जगत् में सहज प्रसिद्धि हो, यह बात अलग है; परन्तु धर्मी को तो अपने में ही तृप्ति है, दुनिया में प्रसिद्धि की कोई दरकार नहीं है। दुनिया स्वीकार करे, तभी मेरा गुण सच्चा - ऐसी कोई अपेक्षा नहीं है और दुनिया स्वीकार न करे तो मेरे गुण को कोई नुकसान हो जाये - ऐसा भी नहीं है। मेरे गुण मैंने दुनिया के पास से तो नहीं लिये हैं, मेरे आत्मा में से ही गुण प्रगट किये हैं, अत: मेरे गुण में दुनिया की अपेक्षा

मुझे नहीं है। इसप्रकार धर्मी जगत् से उदास निजगुण में नि:शंक वर्तते हैं।

धर्मात्मा को जातिस्मरणादि ज्ञान हो जाये, ज्ञान की शुद्धता के साथ अनेक लब्धियाँ भी प्रगटें, अनेक मुनिवरों को विशेष लब्धियाँ हो जाये, अवधि-मन:पर्ययज्ञान भी हो जाये, किन्तु जगत् को वह मालूम भी न हो, वे मुनि अपने आप में आत्मा की साधना में मशगूल वर्तते हैं। अपनी पर्याय में अपने गुणों की प्रसिद्धि हुई (अनुभूति हुई), तब आत्मा स्वयं अपने आप से ही संतुष्ट एवं तृप्त हो जाता है; अपने गुण के शांतरस को आप स्वयं ही वेदता है, वह दूसरे को दिखाने का क्या काम है ? और दूसरे जीव भी ऐसी अंतर्दृष्टि के बिना गुण को कैसे पहचानेंगे? इसप्रकार धर्मी अपने गुणों को अपने में गुप्त रखते हैं और अन्य साधर्मी के अवगुण भी गुप्त रखकर उन्हें दूर करने का उपाय करते हैं।

भाई ! किसी का अवगुण प्रसिद्ध हो - इससे तुझे क्या लाभ ? और उसके अवगुण प्रसिद्ध न हों, उससे तुझे क्या नुकसान ? जो करेगा, वह भोगेगा; अत: दूसरे के गुण-दोष का फल उसे ही है, उसमें तुझे क्या ? इसलिए समाज में धर्म की निंदा न हो और प्रभावना हो तथा गुणों में वृद्धि हो, उसप्रकार धर्मी प्रवर्तते हैं।

किसी भी तरह अपने में एवं पर में गुण की वृद्धि हो और दोष दूर हो, आत्मा का हित हो और धर्म की शोभा बढ़े - इसप्रकार धर्मी का प्रवर्तन होता है। कोई साधर्मी जन से कोई दोष हो गया हो और अपने ध्यान में आ जाये तो उसको गुप्तरूप से बुलाकर धर्मात्मा प्रेम से समझाते हैं कि देखो भाई ! अपना जैनधर्म तो महान पवित्र है, महान भाग्य से अपने को ऐसा धर्म मिला है; उसमें तेरे से इतना दोष हो गया, परन्तु इससे तुम घबड़ाना मत, तुम आत्मा के श्रद्धा-ज्ञान में दृढ़ रहना। जिनमार्ग महान पवित्र है, अत्यंत भक्ति से उसकी आराधना करके तुम अपने सभी दोषों को छेद डालना - इसप्रकार प्रेम से उसे धर्म का उत्साह बढ़ाकर उसके दोष दूर कराते हैं। दोषों के छिपाने से कहीं उसके दोषों को उत्तेजन देने का आशय नहीं है, परन्तु तिरस्कार करने से तो वह जीव निरुत्साही हो जाये और बाह्य में भी धर्म की निंदा होगी; अत: ऐसा न होने देने का आशय है तथा गुण की प्रीति से शुद्धि की वृद्धि का हेतु है - ऐसा धर्मी का उपगूहन तथा उपबृंहण अंग है। इस अंग के पालन में जिनेन्द्रभक्त एक सेठ की कथा पुराण में प्रसिद्ध है, वह ''सम्यक्त्व कथा'' आदि में से देख लेना। इसप्रकार सम्यक्त्व के पाँचवें अंग का वर्णन हुआ। **(क्रमश:)**

नियमसार प्रवचन -

जीव का स्वरूप कैसा है ?

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के शुद्धभावाधिकार की 45-46वीं गाथा पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

गाथा मूलत: इसप्रकार है -

वण्णरसगंधफासा थीपुंसणउंसयादिपज्जाया।
संठाणा संहणणा सव्वे जीवस्स णो संति ।।४५ ।।
अरसमरूवमगंधं अव्वत्तं चेदणागुणमसद्दं।
जाण अलिंगग्गहणं जीवमणिद्दिट्ठसंठाणं ।।४६ ।।

(हरिगीत)

स्पर्श रस गंध वर्ण एवं संहनन संस्थान भी।
नर, नारि एवं नपुंसक लिंग जीव के होते नहीं।।४५।।
चैतन्यगुणमय आतमा अव्यक्त अरस अरूप है।
जानो अलिंगग्रहण इसे यह अर्निदिष्ट अशब्द है।।४६।।

वर्ण-रस-गंध-स्पर्श, स्त्री-पुरुष-नपुंसकादि पर्यायें, संस्थान और संहनन-ये सब जीव को नहीं है।

जीव को अरस, अरूप, अगंध, अव्यक्त, चेतनागुणवाला, अशब्द, अलिंगग्रहण (लिंग से अग्राह्य) और जिसे कोई संस्थान नहीं कहा है ऐसा जानो।

(गतांक से आगे ...)

निर्मलपर्याय भी अस्थिर है - उसके साथ नाता मत रखो; कारणपरमात्मा जो एकरूप है - उसी के साथ नाता रखो; शुद्धस्वभाव ही धर्म का कारण है - ऐसा तू जान।

यहाँ मुनिराज कहते हैं कि हे शिष्य तू जान! तू ऐसा जान कि सम्यग्दर्शन अथवा केवलज्ञान की प्राप्ति करने के लिए एकरूप कारणपरमात्मा ही उपादेय है। इससे सिद्ध हुआ कि शिष्य जानने की पात्रता रखता है, शक्ति रखता है। केवली, मुनि अथवा संत तुझे ज्ञान कराने में समर्थ नहीं हैं, अतः वे कहते हैं कि 'तू जान'। चौदह पूर्व और

चारों अनुयोगों का सार इसमें आ जाता है।

लौकिक में भी कहा जाता है कि अस्थिर विचारवाले मनुष्य के साथ व्यापार, धन्धा, नाता आदि मत करो, स्थिर मनुष्य के साथ करो। उसीप्रकार यहाँ कहते हैं कि पर्याय मलिन हो या निर्मल हो, किन्तु अस्थिर है – उसके साथ नाता मत रखो। स्थिर रहने वाला कारण परमात्मा अनादि-अनन्त एकरूप है – उसी के साथ नाता रखो, क्योंकि वही एक धर्म का कारण है – ऐसा तू जान।

इसप्रकार एकत्वसप्तति (श्री पद्मनन्दि आचार्यदेवकृत पद्मनन्दिपंचविंशतिका नामक शास्त्र में एकत्वसप्तति नामक अधिकार के ७९वें श्लोक) में कहा है कि –

(मंदाक्रांता)

आत्मा भिन्नस्तदनुगतिमत्कर्म भिन्नं तयोर्या
प्रत्यासत्तेर्भवति विकृतिः साऽपि भिन्न तथैव।
कालक्षेत्रप्रमुखमपि यतच्च भिन्नं मतं मे
भिन्नं भिन्नं निजगुणकलालंकृतं सर्वमेतत् ।।२२ ।।

(रोला)

जड़ कर्मों से भिन्न आतमा होता है ज्यों।
भावकर्म से भिन्न आतमा होता है त्यों।।
सभी स्वयं के गुण-पर्यायों से अभिन्न हैं।
परद्रव्यों से भिन्न सदा सब ही होते हैं।।२२।।

श्लोकार्थ : मेरा ऐसा मंतव्य है कि आत्मा पृथक् है और उसके पीछे-पीछे चलनेवाला कर्म पृथक् है; आत्मा और कर्म की अति निकटता से जो विकृति होती है वह भी उसीप्रकार (आत्मासे) पृथक् है; और काल-क्षेत्रादि जो हैं, वे भी (आत्मा से) पृथक् हैं। निज-निज गुणकला से अलंकृत यह सब पृथक्-पृथक् हैं (अर्थात् अपने-अपने गुणों तथा पर्यायों से युक्त सर्व द्रव्य अत्यन्त भिन्न-भिन्न हैं)।''

जिसप्रकार कर्म और आत्मा भिन्न हैं; उसीप्रकार विकार और कारणपरमात्मा भी भिन्न हैं; अतः स्वभावदृष्टि कर।

श्री पद्मनन्दि आचार्य कहते हैं कि मेरा मन्तव्य है कि आत्मा भिन्न है और कर्म जो कि उसके पीछे-पीछे अपने कारण से आता है, उसका आत्मा से कोई सम्बन्ध नहीं है। आत्मा और कर्म एकक्षेत्र में हैं, अति निकट हैं। अज्ञानी जीव कर्म के ऊपर दृष्टि करके मिथ्यात्व, अज्ञान, राग-द्वेष करता है; वे एक समय की अवस्था में हैं,

किन्तु शुद्धस्वभाव में नहीं हैं। जैसे आत्मा और कर्म भिन्न-भिन्न हैं, वैसे ही आत्मा और विकार भी भिन्न-भिन्न हैं – ऐसा कहकर विकार पर से दृष्टि हटाई है और शुद्ध चैतन्य की दृष्टि कराई है। विकार, कर्म और निमित्त की रुचि मत कर, किन्तु त्रिकाली स्वभाव की रुचि कर – ऐसा कहने का आशय है।

आत्मा परद्रव्य के द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से जुदा है, अतः स्व-आत्मा के समक्ष देख।

आत्मा दूसरे के द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से नास्तिरूप है, उनके गुण-पर्यायों से भिन्न है। प्रत्येक द्रव्य निज-निज गुणकला से शोभायमान है और प्रत्येक भिन्न-भिन्न है; इसलिए कोई द्रव्य किसी को सहायता नहीं करता। चलने में धर्मद्रव्य और ठहरने में अधर्मद्रव्य सहायता करे – ऐसा बनता नहीं, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य असहाय है; अतः परद्रव्य से दृष्टि हटाकर निज द्रव्य पर दृष्टि डाल। तेरा कर्म जुदा है और तेरा विकार भी तेरे कारणपरमात्मा से जुदा है, इसलिए शुद्धद्रव्य की श्रद्धा करने पर सुखी होगा।

और (इन दो गाथाओं की टीका पूर्ण करते हुए टीकाकार मुनिराज श्लोक कहते हैं) –

(मालिनी)

असति च सति बन्धे शुद्धजीवस्य रूपाद्
रहितमखिलमूर्त्तद्रव्यजालं विचित्रम्।
इति जिनपतिवाक्यं वक्ति शुद्धं बुधानां
भुवनविदितमेतद्भव्य जानीहि नित्यम् ।।७० ।।

(रोला)

अरे बंध हो अथवा न हो शुद्धजीव तो।
सदा भिन्न ही विविध मूर्त द्रव्यों से जानो।।
बुधपुरुषों से कहे हुए जिनदेव वचन इस।
परमसत्य को भव्य आतमा तुम पहिचानो।।७०।।

श्लोकार्थ : ''बन्ध हो न हो (अर्थात् बन्धावस्था में या मोक्षावस्था में), समस्त विचित्र मूर्तद्रव्यजाल (अनेकविध मूर्तद्रव्यों का समूह) शुद्ध जीव के रूप से व्यतिरिक्त है'' ऐसा जिनदेव का शुद्ध वचन बुधपुरुषों को कहते हैं। इस भुवनविदित को (इस जगत प्रसिद्ध सत्य को), हे भव्य! तू सदा जान।

बन्ध हो या न हो, आत्मा कर्म से त्रिकाल भिन्न है।

संसारदशा के समय बन्ध निमित्त पुद्‌गल कर्म हो अथवा मोक्षदशा के समय कर्म का अभाव हो, परन्तु समस्त विचित्र मूर्तकर्मों का समूह शुद्धजीव के रूप से जुदा है। कर्म भले ही एक क्षेत्र में हों, किन्तु आत्मा उससे त्रिकाल भिन्न है। कर्म से बंधा हुआ हूँ - ऐसी स्थिति के, ऐसे रस के, ये कर्म इन प्रकृतिरूप बंधे - यह बात जाने दें, तेरे में तो कर्म का अत्यन्त अभाव है, आकुलित मत हो; ऐसा देवाधिदेव का वचन है। भगवान शुद्ध हैं, अतः उनका वचन भी शुद्ध है। व्यवहार का वचन भले हो - गोमट्टसार में अनेक प्रकार से कथन हो - परन्तु निश्चयनय का वचन शुद्ध है। वह कहता है कि आत्मा कर्मों से तीनकाल भिन्न है इसलिये घबराना नहीं। सारा कारणशुद्धपरमात्मा तेरे पास पड़ा है। मुनिराज ने कारणपरमात्मा के गाने गाकर इस श्लोक की रचना की है।

हे भव्य! तेरा शुद्धआत्मा कर्म से और विकार से भिन्न है - ऐसा तू जान।

यह जगप्रसिद्ध बात है। अज्ञानी जीव की जो इसप्रकार नहीं जानता उसकी जगत में गणना नहीं की है। यहाँ तो चतुर पुरुष कहते हैं कि हे योग्य जीव! तेरा आत्मा कर्म और विकार से सदा भिन्न है - ऐसा तू जान। प्रथम व्यवहार और बाद में निश्चय, इस प्रकार पहले-पीछे की बात जाने दे। तुझे शान्ति चाहिये और धर्म करना हो तो कर्म और विकार से आत्मा भिन्न है - ऐसा जान। निश्चयस्वभाव का ज्ञान होने पर राग का, अपूर्ण पर्याय का, निमित्त का, व्यवहार का ज्ञान भी हो जायेगा। जिसको निश्चय का ज्ञान नहीं है, उसे व्यवहार का ज्ञान नहीं होता। भगवान मोक्ष पधारे वह भी शुद्धस्वभाव की श्रद्धा-ज्ञान-एकाग्रता से ही पधारे थे। आज भी इसी विधि से और भविष्य में भी इसी विधि से जायेंगे, अतः कर्म और विकार से आत्मा को भिन्न जान।

(क्रमशः)

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें -
वेबसाईट - www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र-श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail- info@vitragvani.com

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : मोक्षमार्ग की साधक मुनिदशा किसे होती है ?

उत्तर : उपरोक्तानुसार वस्तुस्वरूप का निश्चय करके उसमें जो एकाग्र होता है, उसी को श्रामण्य होता है।

प्रश्न : श्रामण्य का दूसरा नाम क्या है ?

उत्तर : श्रामण्य का दूसरा नाम है मोक्षमार्ग। जहाँ मोक्षमार्ग है, वहीं श्रामण्य है। जिसे मोक्षमार्ग नहीं है, उसे श्रामण्य भी नहीं है।

प्रश्न : मुनिराज तो महाव्रतादि पालते हैं, उन्हें आस्रवभाव क्यों कहा है ? वे तो चारित्र हैं ?

उत्तर : धवला भाग 1 और 12 में आता है कि मुनि पंच महाव्रत को 'भुक्ति' अर्थात् भोगते हैं, परन्तु पंच महाव्रत को करते हैं अथवा पालते हैं - ऐसा नहीं कहा। जैसे जगत् के जीव अशुभराग को भोगते हैं, वैसे ही मुनि भी शुभराग को भोगते हैं। समयसारादि अध्यात्मशास्त्रों में तो ऐसा लेख आता ही है, परन्तु व्यवहार के ग्रन्थ धवला में भी मुनि पंच महाव्रत के शुभराग को भोगते हैं - ऐसा कहा है।

कम्बल या गलीचा आदि पर छपा हुआ सिंह किसी को मार नहीं सकता, वह तो कथनमात्र ही सिंह है। उसीप्रकार अन्तर्जल्प-बाह्यजल्प बाह्यक्रियारूप चारित्र है, वह कथनमात्र चारित्र है, सच्चा चारित्र नहीं है; कारण कि वह आत्मद्रव्य के स्वभावरूप नहीं है, पुद्‌गलद्रव्य के स्वभावरूप होने से वह कर्म के उदय का कार्य है। भले ही अशुभ से बचने के लिए शुभ होता है; परन्तु है तो वह बन्ध का ही कारण, मोक्ष का कारण तो है नहीं।

प्रश्न : अभेदस्वरूप आत्मा की अनुभूति हो जाने के बाद व्रतादि करने से क्या लाभ ?

उत्तर : शुद्धात्मा का अनुभव होने के बाद पंचम्-षष्ठम् गुणस्थानों में उस-उस प्रकार का राग भूमिकानुसार आये बिना रहता नहीं। वह शुभराग बन्ध का ही कारण है और हेय है - ऐसा ज्ञानी जानता है। शुद्धता की वृद्धि अनुसार कषाय घटती जाती होने के कारण व्रतादि का शुभराग आए बिना रहता ही नहीं - ऐसा ही स्वभाव है।

प्रश्न : व्रत-तप आदि सब विकल्प हैं तो इन्हें करना या नहीं ?

उत्तर : करने न करने की बात नहीं। सम्यग्दर्शन के बाद पाँचवें गुणस्थान में वे विकल्प आते हैं, वे शुभ राग हैं, धर्म नहीं; ऐसा ज्ञानी जानते हैं। मिथ्यादृष्टि को ऐसे विकल्प आने पर शुभराग से पुण्य बँधता है - पर वह उस राग से धर्म मानता है, उसे अपना स्वरूप मानता है, अत: मिथ्यात्व भी बँधता है। शुभ छोड़कर अशुभ में जाने की बात नहीं है, परन्तु शुभराग अपना स्वरूप नहीं - ऐसा जानकर शुद्धता प्रगट करने की बात है।

प्रश्न : सच्चा समताभाव किसे होता है ?

उत्तर : स्व-पर तत्त्व भिन्न-भिन्न हैं - ऐसा स्वतन्त्र वस्तुस्वरूप समझे नहीं और वस्तु को पराधीन माने, उसे सच्चा समताभाव नहीं हो सकता। वस्तुस्वरूप को पराधीन मानने की मान्यता में ही अनन्त विषमभाव पड़ा है। भले बाहर से क्रोधी न दिखाई पड़े और मन्दकषाय रखता हो, तथापि जहाँ वस्तुस्वरूप का भान नहीं है, वहाँ समता का अंश भी नहीं होता। आत्मा के ज्ञानस्वभाव का अनादर ही महान विषमभाव है। प्रत्येक तत्त्व स्वतन्त्र है, कोई किसी के आधीन नहीं। मेरा स्वभाव तो मात्र सबको जानने का है - इसप्रकार वस्तु-स्वातन्त्र्य को जानकर अपने ज्ञानस्वभाव का आदर करना ही सच्चा समभाव है।

प्रश्न : इस धर्म में कहीं त्याग या ग्रहण करने की बात तो आई ही नहीं ?

उत्तर : इसमें ही यथार्थ ग्रहण-त्याग की बात आ जाती है। ग्रहण या त्याग किसी बाह्यवस्तु का तो हो नहीं सकता, वह तो अन्तर में ही होता है। बाह्यवस्तु को ग्रहण-त्याग कर सकने की मान्यता तो अधर्म है। भले ही ऐसी मान्यतावाला जीव हरितकाय का त्यागी हो और भगवान के नाम का जप करता हो, तथापि वह अधर्मी है। मैं परवस्तु का ग्रहण-त्याग कर सकता हूँ अथवा राग व मन्दकषाय से मुझे धर्म होगा - ऐसी विपरीत मान्यता का त्याग और जड़ एवं विकार से भिन्न अन्तर में अपना स्वभाव पूर्ण ज्ञायकमूर्ति है, उसकी श्रद्धा-ज्ञान-स्थिरता का ग्रहण ही धर्म है। श्रद्धा में पूर्णस्वभाव का ग्रहण और अपूर्णता का त्याग धर्म है।

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

7 जून से 24 जुलाई	विदेश	धर्मप्रचारार्थ
4 से 13 अगस्त	जयपुर	महाविद्यालय शिविर
2 से 9 सितम्बर	मुम्बई	श्वेताम्बर पर्युषण
9 से 18 सितम्बर	इन्दौर	दशलक्षण पर्व

समाचार दर्शन -

गुरुदेवश्री कानजीस्वामी जयन्ती संपन्न

1. जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक 12 मई को गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की 124वीं जन्मजयन्ती बहुत उत्साहपूर्वक मनाई गयी।

कार्यक्रम के अध्यक्ष पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, मुख्य अतिथि श्री सुशीलकुमारजी गोदीका जयपुर एवं मुख्य वक्ता तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल थे।

इस अवसर पर पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल ने गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सम्बन्ध में कहा कि जैनधर्म के प्रमुख सिद्धान्तों में से एक क्रमबद्धपर्याय उन्हीं से समझा है। इसी तत्त्वज्ञान का प्रचार-प्रसार करने हेतु अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित किया है। डॉ. श्रीयांसजी शास्त्री ने अपने वक्तव्य में कहा कि गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के जीवन में चारों अनुयोगों का सुमेल देखने को मिलता था। श्री राजेशजी विदिशा ने कहा कि डॉ. भारिल्ल ने जिस मेहनत/लगन और समर्पण के साथ महाविद्यालय रूपी पौधे को सींच-सींच कर वटवृक्ष बनाया है। आज उसका एक-एक विद्यार्थी गुरुदेव है और एक-एक धाम सोनगढ जैसा कार्य कर रहे हैं।

अन्त में डॉ. भारिल्ल ने अपने उद्‌बोधन में पूज्य गुरुदेवश्री के सत्समागम के अनेक महत्वपूर्ण संस्मरण सुनाये; जिससे श्रोताओं के साथ-साथ छात्रों को गुरुदेवश्री के शुद्ध-सात्विक जीवन का परिचय प्राप्त हुआ।

इसके पूर्व प्रात: पंचतीर्थ जिनालय में अ.भा. जैन युवा फैडरेशन जयपुर महानगर द्वारा सामूहिक मासिक पूजन की गई। इस अवसर पर 200-250 लोग उपस्थित थे।

2. देवलाली-नासिक (महा.) : यहाँ ईस्वी सन् के अनुसार दिनांक 21 अप्रैल को गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की जयन्ती मनाई गई। इस अवसर पर दिनांक 17 से 21 अप्रैल तक विधान एवं प्रवचनों का विशेष आयोजन किया गया।

इस अवसर पर तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा ग्रन्थाधिराज समयसार के मोक्ष अधिकार पर, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली द्वारा दृष्टि का निधान (गुरुदेव के प्रवचनों का संकलन) पर एवं ब्र. हेमचन्दजी 'हेम' देवलाली द्वारा नियमसार पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला।

कार्यक्रम में 64 ऋद्धि विधान का भी आयोजन किया गया। विधि-विधान के संपूर्ण कार्य पण्डित अभयजी, दीपकजी धवल भोपाल, एवं श्री अमृतभाई द्वारा संपन्न हुये।

दिनांक 21 अप्रेल को प्रात: प्रभातफेरी निकाली गई। तत्पश्चात् सभी विद्वानों व गुरुजनों ने गुरुदेवश्री द्वारा प्रारंभ की गई आध्यात्मिक क्रान्ति को याद करते हुए जिनधर्म प्रभावना में उनके योगदान की बहुत प्रशंसा की।

महावीर जयन्ती सानन्द सम्पन्न

1. जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल स्मारक भवन में महावीर जयन्ती के अवसर पर दिनांक 23 अप्रैल को प्रात: ध्वजारोहण पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल, श्री सुशीलकुमारजी गोदिका, श्री जगनमलजी सेठी एवं श्री महेन्द्रकुमारजी पाटनी के करकमलों द्वारा हुआ। उनके साथ पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील, पीयूषजी शास्त्री, सोनूजी शास्त्री आदि महानुभाव उपस्थित थे। इसके पश्चात् प्रभात फेरी निकाली गई। जिनेन्द्र भक्ति एवं नाचगान करते हुए रथयात्रा लालकोठी मन्दिर पहुँची, जहाँ ध्वजारोहण एवं कलशाभिषेक हुआ। इसके पश्चात् रथयात्रा पार्श्वनाथ चैत्यालय पहुँची, जहाँ ध्वजारोहण व कलशाभिषेक के पश्चात् आयोजित सभा में पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के मार्मिक उद्बोधन का लाभ मिला।

इसके पश्चात् रथयात्रा जयपुर शहर की मुख्य रथयात्रा में सम्मिलित हुई, जिसमें फैडरेशन महानगर जयपुर की भजन मण्डली भी सम्मिलित हुई।

महिला मण्डल का विशेष कार्यक्रम – यहाँ श्री वीतराग-विज्ञान महिला मण्डल, बापूनगर द्वारा दिनांक 24 अप्रैल को श्राविका सभा का भव्य आयोजन किया गया। इस अवसर पर संगीतमय भक्ति-भजन के साथ प्रश्नोत्तरों के माध्यम से 'हम सब संस्कारी बनें', 'नई पीढी को कैसे संस्कारवान बनायें' आदि विषयों के साथ आध्यात्मिक चर्चा द्वारा आत्मकल्याण का मार्ग प्रस्तुत किया गया। कार्यक्रम में जयपुर समाज के अनेक महिला मण्डलों ने भाग लिया।

कार्यक्रम की अध्यक्षता श्रीमती विमलाजी छाबड़ा ने की। अन्त में डॉ. भारिल्ल द्वारा रचित श्री महावीर वन्दना का कैलेन्डर, पॉलीथीन के दुष्प्रभाव बताने वाले पोस्टर एवं कपड़े से बने थैले वितरित किये गये। कार्यक्रम का संचालन श्रीमती सुशीलाजी जैन ने किया।

2.भोपाल-कोहेफिजा (म.प्र.) : यहाँ महावीर जयन्ती दिनांक 23 अप्रैल को तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के सानिध्य एवं श्री बाबूलालजी गौर (पूर्व मुख्यमंत्री म.प्र. एवं वर्तमान स्थानीय शासन मंत्री म.प्र. शासन) के मुख्य आतिथ्य में सम्पन्न हुआ।

महावीर जयन्ती धर्मसभा में भगवान महावीर के चित्र का अनावरण डॉ. भारिल्ल, श्री बाबूलालजी गौर, श्री महेन्द्रजी चौधरी (अध्यक्ष-जैन मन्दिर समिति कोहेफिजा), श्री प्रभातजी बज (महामंत्री), श्री मुकेशजी जैन ढाईद्वीप इन्दौर एवं श्री सुनीलजी 501 द्वारा किया गया।

इस अवसर पर डॉ. भारिल्ल ने कहा कि भगवान महावीर का जीवन घटना प्रधान नहीं है। उनके व्यक्तित्व को घटनाओं से नापना संभव नहीं है, उनका विराट व्यक्तित्व तो उनके शुद्ध-सात्विक जीवन और गुरु गंभीर सिद्धांतों के प्रतिपादन में है। उन्होंने अहिंसा, अनेकान्त, स्याद्वाद, अपरिग्रह एवं अकर्तावाद संबन्धी जिन सिद्धांतों का प्रतिपादन किया; वे सिद्धान्त

सार्वभौमिक, सार्वकालिक और सार्वजनिक हैं।

डॉ. भारिल्ल के इन शब्दों को सुनकर श्री गौर ने कहा कि वास्तव में भगवान महावीर स्वामी को, उनके स्वरूप को सुनना हो तो डॉ. भारिल्लजी से सुने, उनका अनुशीलन अद्वितीय है। इस अवसर पर ब्र.अभिनन्दनजी शास्त्री खनियांधाना द्वारा श्री सिद्धचक्र मण्डल विधान का भी आयोजन किया गया, जिसमें अनेक साधर्मियों ने सम्मिलित होकर लाभ लिया।

विद्वत्संगोष्ठी संपन्न

भोपाल (म.प्र.) : यहाँ महावीर जयन्ती की पूर्व संध्या पर दिनांक 22 अप्रैल को समन्वय भवन ऑडिटोरियम टी.टी. नगर में गोष्ठी का आयोजन किया गया।

गोष्ठी का विषय था क्रमबद्धपर्याय : एक अनुशीलन, जिसकी अध्यक्षता तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने की।

कार्यक्रम में भगवान महावीर के चित्र का अनावरण पद्मश्री उमाकांत, रमाकांतजी गुंदेचा, श्री मुकेशजी जैन ढाईद्वीप इन्दौर, श्री महेन्द्रजी चौधरी एवं श्री अशोकजी जैन 'सुभाष ट्रांसपोर्ट' द्वारा हुआ।

इस अवसर पर ब्र. अभिनन्दनजी खनियांधाना, डॉ. राकेशजी शास्त्री नागपुर, डॉ. गणतंत्रजी शास्त्री आगरा, डॉ. महेशजी भोपाल आदि विद्वान भी उपस्थित थे।

समस्त विद्वानों के व्याख्यान के उपरान्त डॉ. भारिल्ल ने क्रमबद्धपर्याय को अत्यन्त सरल और सुबोध शैली में प्रस्तुत किया कि जिससे समस्त समागत जैनाजैन समुदाय ने क्रमबद्धपर्याय के सिद्धान्त को आत्मसात किया और अपनी सहमति जताई। कार्यक्रम के अतिविशिष्ट अतिथि श्वेताम्बर बंधु पद्मश्री उमाकांत रमाकांत गुंदेचा ने कहा कि मैंने आज तक जैन समाज में ऐसे विद्वान को नहीं सुना।

श्री सिद्धचक्र मण्डल विधान संपन्न

कोहेफिजा-भोपाल (म.प्र.) : यहाँ कोहेफिजा जैन समाज द्वारा दिनांक 21 से 27 अप्रैल तक श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान का आयोजन हुआ, जिसमें तत्त्वेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचनों का लाभ मिला।

दिनांक 23 अप्रैल को महावीर जयन्ती के अवसर पर धर्मसभा का आयोजन श्री बाबूलालजी गौर (पूर्व मुख्यमंत्री म.प्र. शासन) के मुख्य आतिथ्य में किया गया। कार्यक्रम का संचालन श्रीमती कीर्ति चौधरी ने किया। आयोजन को सफल बनाने में श्री महेन्द्रजी चौधरी, श्री सुनील जैन 501, श्री प्रभात बज, श्री महेन्द्र जैन (महावीर उद्योग) का सहयोग सराहनीय रहा। इस अवसर पर टोडरमल स्मारक ट्रस्ट को विद्यार्थियों हेतु अनेक स्वीकृतियाँ भी प्राप्त हुई। विधि-विधान के कार्य ब्र. अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री खनियांधाना के निर्देशन में पूर्ण हुये।

जिनमंदिर का शिलान्यास संपन्न

भोपाल (म.प्र.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन जिनश्रुत प्रभावना समिति द्वारा शीतल टाउन मण्डीदीप में दिनांक 28 अप्रैल को श्री शीतलनाथ दिगम्बर जैन मंदिर का शिलान्यास का ऐतिहासिक कार्यक्रम संपन्न हुआ।

इस अवसर पर प्रात: 9 बजे जिनेन्द्र अर्चना एवं मंच निमंत्रण हुआ, तत्पश्चात् मंचासीन डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित शिखरचन्दजी सर्राफ, श्री मनोजजी प्रधान (चैयरमेन-शीतल समूह) द्वारा भगवान महावीर के चित्र का अनावरण किया गया। ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री प्रदीपजी सोगानी द्वारा विद्वानों एवं अतिथियों का सम्मान किया गया। श्रीमती गुणमाला भारिल्ल का सम्मान श्रीमती एकता प्रधान, स्वर्णलता सौगानी एवं ट्रस्ट की उपाध्यक्ष श्रीमती अनुराधा प्रधान ने किया। कार्यक्रम का स्वागत भाषण श्री मनोजजी प्रधान ने किया।

विशाल जनसमूह को संबोधित करते हुए तत्त्ववेत्ता डॉ. भारिल्ल ने कहा कि जिस प्रकार एक रिक्शेवाला अपने बैंकखाते में करोड़ रुपये जानकर, मानकर गौरव का अनुभव करता है, उसी प्रकार ज्ञान का घनपिण्ड, आनन्द का रसकन्द, शक्तियों का संग्रहालय, अनंत गुणों का गोदाम भगवान आत्मा मैं स्वयं ही हूँ, ऐसी श्रद्धा व ज्ञान करने पर तत्काल ही अपने अनंत दु:ख दूर हो जाते हैं। यह जीव अब तक अपने को दीन-हीन, पामर मान रहा था, परन्तु जब वह जान लेता है कि मैं स्वयं ही परमात्मा हूँ, मुझे परपदार्थों से सुख नहीं मिलेगा, सुख तो स्वयं के आश्रय से ही मिलेगा, तब वह अनंत सुखी हो जाता है। अत: पर का लक्ष्य छोड़कर स्व का लक्ष्य करना ही एकमात्र कर्तव्य है।

संपूर्ण कार्यक्रम का संचालन ट्रस्ट के महामंत्री इंजी. पुनीत मंगलवर्धिनी द्वारा किया गया।

शिलान्यास-विधि का कार्य ब्र.अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री खनियांधाना के निर्देशन में पण्डित सुनीलजी धवल भोपाल, पण्डित अनिलजी धवल भोपाल एवं पण्डित दीपकजी धवल भोपाल के सहयोग से संपन्न हुआ।

आगामी कार्यक्रम...

भिण्ड (म.प्र.) में श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान उज्जैन, श्री कुन्दकुन्द स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट, भिण्ड एवं अ.भा. जैन युवा फैडरेशन भिण्ड के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 9 जून से 18 जून तक नौवां सामूहिक जैन बाल संस्कार शिक्षण शिविरों का आयोजन किया जा रहा है। अतएव जो बालबोध भाग 1,2,3 व वीतराग-विज्ञान 1,2,3 व छहढाला आदि पढा सकते हैं, हमें मोबाईल नम्बर 09826646644 (डॉ. सुरेश जैन) या 9826472529 (पुष्पेन्द्र जैन) पर सूचित करने की कृपा करें।

बोर्ड में प्रथम स्थान

1. सुश्री विपाशा जैन सुपुत्री पण्डित राजकुमारजी शास्त्री (टोडरमल महाविद्यालय के स्नातक) एवं डॉ. ममता जैन बांसवाड़ा ने राजकीय वरिष्ठ उपाध्याय संस्कृत विद्यालय गनोड़ा में वरिष्ठ उपाध्याय परीक्षा में ८८.६ प्रतिशत अंक प्राप्त कर **राज्य की वरीयता सूची में प्रथम स्थान** प्राप्त किया है। ज्ञातव्य है कि विपाशा जैन ने कक्षा 10वीं में 94 प्रतिशत अंक प्राप्तकर जैन तत्त्वज्ञान के अध्ययन व प्रचार-प्रसार की भावना व जैनदर्शन व संस्कृत के अध्ययन की अभिरुचि होने से शास्त्री करने का निर्णय लिया। ध्रुवधाम में अध्ययनरत छात्रों का भी बोर्ड परीक्षा परिणाम प्रतिवर्ष की भांति शत-प्रतिशत रहा है। **– अगम जैन**

2. देवरी-बारां (राज.) निवासी चि. आदित्य जैन का शुभ विवाह सौ.कां. प्रियंका जैन के साथ दिनांक 2 फरवरी को संपन्न हुआ। इस उपलक्ष्य में टोडरमल स्मारक ट्रस्ट हेतु 500/- रुपये प्राप्त हुये।

विधान एवं वार्षिकोत्सव संपन्न

कोटा (राज.) : यहाँ इन्द्रविहार स्थित श्री सीमंधर जिनालय में 3 से 5 मई तक 170 तीर्थंकर मण्डल विधान पूर्वक वार्षिकोत्सव संपन्न हुआ।

इस अवसर पर जिनमंदिर में सीमंधर भगवान की वेदी पर 64 चंवर स्थापित किये गये। साथ ही पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के मार्मिक प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित रतनचन्दजी शास्त्री, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री, पण्डित जयकुमारजी आदि स्थानीय विद्वानों का भी सान्निध्य प्राप्त हुआ। रात्रि में पाठशाला के बच्चों द्वारा माता-देवियों की चर्चा एवं दीक्षा कल्याणक का रूप की प्रेरक चर्चा की गई। श्रीमती सीमा जैन एवं ज्योति जैन ने कार्यक्रम का संचालन किया।

विधि-विधान के समस्त कार्य पण्डित सुनीलजी 'धवल' भोपाल एवं कान्तिकुमारजी इन्दौर ने संपन्न कराये।

श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई
द्वारा संचालित
ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में

36 वाँ बृहद् आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर

(दिनांक 4 अगस्त से 13 अगस्त, 2013 तक)

इस शिविर में तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के अतिरिक्त अन्य अनेक विद्वानों के प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ प्राप्त होगा।

आप सभी सादर आमंत्रित हैं।

47 वें शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर का उद्‌घाटन

देवलाली (नासिक-महा.) : पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर द्वारा संचालित एवं पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट देवलाली द्वारा आयोजित 47वें श्री वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर का उद्‌घाटन समारोह मंगलवार, दिनांक 21 मई, 2013 को श्री हिम्मतलाल हरिलाल शाह मुम्बई की अध्यक्षता में सानन्द सम्पन्न हुआ।

ध्वजारोहणकर्त्ता श्री प्रदीपभाई खारा मुम्बई ने स्वागत भाषण दिया। शिविर का उद्‌घाटन श्री अशोकभाई रतीलाल घीया मुम्बई द्वारा हुआ।

इस अवसर पर पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर, ब्र. अभिनन्दनजी खनियांधाना, ब्र. यशपालजी जैन जयपुर, पण्डित अभयजी शास्त्री देवलाली, ब्र. हेमचन्दजी 'हेम' देवलाली, पण्डित कोमलचन्दजी टडा, पण्डित कमलचन्दजी पिड़ावा, श्री प्रमोदजी मकरोनिया आदि महानुभाव मंचासीन थे।

उद्‌घाटन समारोह में ब्र. यशपालजी ने आगन्तुक विद्वद्‌गण एवं अतिथियों का स्वागत करते हुये पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर का परिचय दिया तथा शिविर की रूपरेखा पण्डित कमलचन्दजी पिड़ावा ने बताई। पण्डित अभयजी शास्त्री ने 50वाँ शिविर भी देवलाली में ही लगाये जाने की भावना व्यक्त की।

सभा का संचालन पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री जयपुर ने किया।

शिविर के प्रथम दिन 500 साधर्मियों की उपस्थिति में नित्य नियम पूजन के उपरान्त जुलूसपूर्वक कहान नगर की परिक्रमा दी गई। तत्पश्चात् ध्वजारोहण, गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन एवं पण्डित अभयजी शास्त्री के प्रवचन का लाभ मिला। ●

शोक समाचार

1. सागर (म.प्र.) निवासी सिंघई बाबूलालजी सर्राफ का दिनांक 10 अप्रैल को 94 वर्ष की आयु में समताभावपूर्वक देहावसान हो गया। आप बहुत स्वाध्यायी थे। गुरुदेव के जीवनकाल में आप प्रतिवर्ष सोनगढ शिविर में एवं उसके पश्चात् सन् 2000 तक जयपुर शिविरों में जाते रहे। आपकी स्मृति में टोडरमल स्मारक ट्रस्ट हेतु 1101/- रुपये प्राप्त हुये।

2. कोलकाता निवासी श्री जुगराजजी कासलीवाल की धर्मपत्नी श्रीमती कंचनदेवी का दिनांक 6 मई को 85 वर्ष की आयु में शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में टोडरमल स्मारक ट्रस्ट हेतु 2200/- रुपये प्राप्त हुये।

3. लाम्बाखोह (राज.) निवासी श्री शान्तिलालजी ठोला का दिनांक 15 मई को समताभावपूर्वक देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में टोडरमल स्मारक ट्रस्ट हेतु 2200/- रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मायें चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत सुख को प्राप्त करें-यही मंगल भावना है।

वीतराग-विज्ञान (जून-मासिक) ● 26 मई 2013 ● वर्ष 31 ● अंक 11